॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ अथर्ववेद संहिता ॥

॥ अथर्ववेद॥

॥ अथ प्रथमं काण्डम्॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन
॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १- मेधाजनन सूक्त 5

सूक्त २- रोग-उपशमन सूक्त 8

सूक्त ३- मूत्र मोचन सूक्त 10

सूक्त ४- अपांभेषज (जल चिकित्सा) सूक्त 14

सूक्त ५- अपांभेषज (जल चिकित्सा) सूक्त 16

सूक्त ६- अपांभेषज (जल चिकित्सा) सूक्त 18

सूक्त ७- यातुधाननाशन सूक्त 21

सूक्त ८- यातुधाननाशन सूक्त 25

सूक्त ९ -विजय प्रार्थना सूक्त 27

सूक्त १०- पाश विमोचन सूक्त 30

सूक्त ११- नारी सुख प्रसूति सूक्त 33

सूक्त १२- यक्ष्मनाशन सूक्त 37

सूक्त १३- विद्युत् सूक्त 40

सूक्त १४- कुलपाकन्या सूक्त 43

सूक्त १५- पुष्टिकर्म सूक्त 45

सूक्त १६- शत्रुबाधन सूक्त 47

सूक्त १८- अलक्ष्मीनाशन सूक्त 51

सूक्त १९- शत्रुनिवारण सूक्त 54

सूक्त २०- शत्रुनिवारण सूक्त 57

सूक्त २१- शत्रुनिवारण सूक्त..... 60
सूक्त २२- हृद्रोगकामलानाशन सूक्त..... 62
सूक्त २३- श्वेत कुष्ठ नाशन सूक्त 64
सूक्त २४- श्वेतकुष्ठ नाशन सूक्त 66
सूक्त २५- ज्वर नाशन सूक्त..... 68
सूक्त २६- सुख प्राप्ति सूक्त..... 71
सूक्त २७- स्वस्त्ययन सूक्त..... 73
सूक्त २८- रक्षोघ्न सूक्त..... 76
सूक्त २९- राष्ट्र अभिवर्धन, सपत्नक्षयण सूक्त 79
सूक्त ३०- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त..... 82
सूक्त ३१- पाशमोचन सूक्त 85
सूक्त ३२- मद्बब्रह्म सूक्त..... 88
सूक्त ३३- आपः सूक्त..... 90
सूक्त ३४- मधुविद्या सूक्त..... 93
सूक्त ३५- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त 96

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १- मेधाजनन सूक्त

देवता वाचस्पति अर्थात वाणी ने स्वामी ब्रह्मदेव की स्तुति

यह त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥१.१.१॥

यह जो त्रिसप्त अर्थात भूः, भुव और स्वः, तीन अर्थात सतवगुण, रजोगुण और तमोगुण तट सात अर्थात पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, तन्मात्रा एवं अहंकार आदि सात पदार्थ के संयोगी, विश्व के स्थावर जंगम आदि समस्त रूपों को धारण करके सभी विचरण करते हैं, हे वाचस्पते वाणी के स्वामी ब्रह्म देव! आप उनके शरीरस्थ बल को आज हमें प्रदान करें ॥१.१.१॥

पुनरेहि वचस्पते देवेन मनसा सह ।
वसोष्पते नि रमय मय्येवास्तु मयि श्रुतम् ॥१.१.२॥

हे वाचस्पते अर्थात वाणी के स्वामी ब्रह्म देव ! आप दिव्यप्रकाशित ज्ञान से युक्त होकर, बारम्बार हमारे सम्मुख आएँ । हे वसोष्पते अर्थात हे प्राण के स्वामी ब्रह्म! ! आप हमारे द्वारा इच्छित अभीष्ट फल प्रदान कर हमें आनंदित करें तथा हमारे द्वारा प्राप्त किए गाए ज्ञान को धारण करने की बुद्धि प्रदान करें ॥१.१.२॥

इहैवाभि वि तनूभे आर्त्नी इव ज्यया ।
वाचस्पतिर्नि यछतु मय्येवास्तु मयि श्रुतम् ॥१.१.३॥

हे वाचस्पते अर्थात वाणी के स्वामी ब्रह्म! धनुष की चढ़ी हुई प्रत्यञ्चा से खिंचे हुए दोनों छोरों के समान हमें दैवी ज्ञान धारण करने में समर्थ, बुद्धि एवं वांछित साधन-सामग्री प्रदान करें । आपके द्वारा प्राप्त बुद्धि तथा वैभव हम में पूर्ण रूप से स्थिर रहें ॥१.१.३॥

उपहूतो वाचस्पतिरुपास्मान् वाचस्पतिर्ह्वयताम् ।
सं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन वि राधिषि ॥१.१.४॥

हे वाचस्पते ! आप हमें निमंत्रित करें। हम आपका आवाहन करते हैं। हमें सदैव आपका सान्निध्य प्राप्त हो । हम कभी भी ज्ञान मार्ग से विमुख न हों तथा सम्पूर्ण ज्ञान से पूर्ण रहें, कभी भी इस ज्ञान से हम दूर न हों ॥१.१.४॥

अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्

सूक्त २- रोग-उपशमन सूक्त

देवता पर्जन्य अर्थात बादल तथा पृथ्वी का वर्णन

विद्या शरस्य पितरं पर्जन्यं भूरिधायसम्।
वो ष्वस्य मातरं पृथिवीं भूरिवर्षसम् ॥१,२.१॥

अनेक प्रकार से स्थावर तथा जंगम पदार्थों को धारण तथा पोषण प्रदान करने वाले बादलों को हम इस शर अर्थात बाण के पिता के रूप में जानते हैं । तथा अनेक प्रकार के पदार्थों से युक्त इस शर अर्थात बाण की माता पृथ्वी को भी हम भली प्रकार से जानते हैं। अर्थ यह है कि हम जानते हैं कि बादल और पृथ्वी दोनों से बाण अर्थात् शक्ति की उत्पत्ति होती है। ॥१,२.१॥

ज्याके परि णो नमाश्मानं तन्वं कृधि ।
वीडुर्वरीयोऽरातीरप द्वेषांस्या कृधि ॥१,२.२॥

हे जन्मदात्री ! आप हमारे शरीरों को चट्टान की तरह सुदृढ़ बनायें तथा शक्ति प्रदान करें । हे धनुष की निंदनीय डोरी! तुम हमारी ओर न झुक कर हमारे शत्रुओं की ओर झुको तथा हमारे शत्रुओं के द्वेषपूर्ण कर्मों कर्मों को शक्तिहीन बनाकर हमसे दूर करें ॥१,२.२॥

वृक्षं यद्वावः परिषस्वजाना अनुस्फुरं शरमर्चन्त्यृभुम् ।
शरुमस्मद्यावय दिद्युमिन्द्र ॥१,२.३॥

जिस प्रकार वृक्ष से संयुक्त गौएँ तेजस्वी 'बाण' को स्फूर्ति प्रदान करती हैं, उसी प्रकार हे इन्द्र ! आप इस तेजोयुक्त बाण को आगे बढ़ाएँ-गतिशील बनाएँ ॥१,२.३॥

यथा द्यां च पृथिवीं चान्तस्तिष्ठति तेजनम् ।
एवा रोगं चास्रावं चान्तस्तिष्ठतु मुञ्ज इत्॥१,२.४॥

घुलोक एवं पृथ्वी के मध्य स्थित तेज की भाँति यह मुञ्ज सभी स्रावों, रसों एवं रोगों के बीच प्रतिष्ठित रहे ॥१,२.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ३- मूत्र मोचन सूक्त

पर्जन्य, वरुण, चंद्र व सूर्य का वर्णन

विद्मा शरस्य पितरं पर्जन्यं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति
॥१,३.१॥

इस शरीर के जनक शतवृष्ण पर्जन्य से हम भली-भाँति परिचित हैं। वह सैकड़ों बलयुक्त पदार्थ वाले मेघ हैं। उससे तुम्हारे कल्याण की कामना है। उनसे तुम्हारा विशेष सेचन हो और शत्रु रुपी विकार बाहर निकल जाएँ ॥१,३.१॥

विद्मा शरस्य पितरं मित्रं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति
॥१,३.२॥

अनन्त बलशाली मित्र देव (प्राण वायु) को, जो 'शर' का पिता है, हम जानते हैं। उससे तुम्हारे कल्याण का उपक्रम शमन करते हैं। उससे तुम्हारा सेचन हो और विकार बाहर निकल जाएँ ॥१,३.२॥

विद्मा शरस्य पितरं वरुणं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति ॥१,३.३॥

'शर' के पालक सशक्त वरुणदेव को हम जानते हैं। उससे तुम्हारे शरीर का कल्याण हो । तुम्हें विशेष पोषण प्राप्त हो तथा विकार बाहर निकल जाएँ ॥१,३.३॥

विद्मा शरस्य पितरं चन्द्रं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति ॥१,३.४॥

हम शर के पिता आह्लादक चन्द्रदेव को जानते हैं, उनसे तुम्हारा कल्याण हो, विशेष पोषण प्राप्त हो और दोष बाहर निकल जाएँ ॥१,३.४॥

विद्मा शरस्य पितरं सूर्यं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति ॥१,३.५॥

हम जानते हैं कि विशेष शक्ति-सम्पन्न पवित्रता प्रदान करने वाले सूर्य 'शर' के पालक हैं, वह तुम्हारा कल्याण करें । उनसे तुम्हें विशिष्ट पोषण प्राप्त हो तथा विकार बाहर निकल जाएँ ॥१,३.५॥

यदान्त्रेषु गवीन्योर्यद्वस्तावधि संश्रितम् ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥१,३.६॥

मूत्र वाहिनी नाड़ियों, मूत्राशय एवं आँतों में स्थित दूषित जल इस चिकित्सा से पूर्ण रूप से, वेग के साथ शब्द करता हुआ शरीर से बाहर निकल जाए ॥१,३.६॥

प्र ते भिनद्मि मेहनं वर्त्रं वेशन्त्या इव ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥१,३.७॥

'शर' से मूत्र मार्ग को खोल देते हैं । बन्ध टूट जाने से जिस प्रकार जलाशय का जल शीघ्रता से बाहर निकलता है, उसी प्रकार रोगी के उदरस्थ से समस्त विकार वेगपूर्वक बाहर निकले ॥१,३.७॥

विषितं ते वस्तिबिलं समुद्रस्योदधेरिव ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥१,३.८॥

तेरे मूत्राशय का द्वार खोलते हैं । विकार युक्त जल उसी प्रकार शब्द करता हुआ बाहर निकले, जिस प्रकार नदियों का जल उदधि में सहज ही बह जाता हैं ॥१,३.८॥

यथेषुका परापतदवसृष्टाधि धन्वनः ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥१,३.९॥

धनुष से छोड़े गए, तीव्र गति से बढ़ते हुए बाण की भाँति तेरा सम्पूर्ण मूत्र (विकार) वेगपूर्वक बाहर निकले ॥१,३.९॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ४- अपांभेषज (जल चिकित्सा) सूक्त

जल देवता की स्तुति

अम्बयो यन्त्यध्वभिर्जामयो अध्वरीयताम् ।
पृञ्चतीर्मधुना पयः ॥१,४.१॥

माताओं-बहनों की भाँति यज्ञ से उत्पन्न पोषक धाराएँ यज्ञ कर्ताओं के लिए पय (दूध या पानी) के साथ मधुर रस मिलाती हैं ॥१,४.१॥

अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह ।
ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् ॥१,४.२॥

सूर्य के सम्पर्क में आकर पवित्र हुआ वाष्पीकृत जल, उसकी शक्ति के साथ पर्जन्य-वर्षा के रूप में हमारे सत्कर्मों को बढ़ाए-यज्ञ को सफल बनाए ॥१,४.२॥

अपो देवीरुप ह्वयह यत्र गावः पिबन्ति नः ।
सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः ॥१,४.३॥

हम उस दिव्य 'आपः' प्रवाह का आह्वाहन करते हैं, जो यज्ञ के लिए हवि प्रदान करते हैं तथा जहाँ हमारी गौएँ तृप्त होती हैं ॥१,४.३॥

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम् ।
अपामुत प्रशस्तिभिरश्वा भवथ वाजिनो गावो भवथ वाजिनीः ॥१,४.४॥

जीवनी शक्ति, रोगनाशक एवं पुष्टिकारक आदि दैवी गुणों से युक्त आपः तत्त्व हमारे अश्वों एवं गौओं को वेग एवं बल प्रदान करे । हम बल-वैभव से सम्पन्न हों ॥४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ५- अपांभेषज (जल चिकित्सा) सूक्त

जल का औषधि के रूप में वर्णन

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन ।
महे रणाय चक्षसे ॥१,५.१॥

हे आपः ! आप प्राणिमात्र को सुख देने वाले हैं। सुखोपभोग एवं संसार में रमण करते हुए, हमें उत्तम दृष्टि की प्राप्ति हेतु पुष्ट करें ॥१,५.१॥

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः ।
उशतीरिव मातरः ॥१,५.२॥

जिनका स्नेह उमड़ता ही रहता है, ऐसी माताओं की भाँति आप हमें अपने सबसे अधिक कल्याणप्रद रस में भागीदार बनाएँ ॥१,५.२॥

तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ ।
आपो जनयथा च नः ॥१,५.३॥

अन्नादि उत्पन्न कर प्राणिमात्र को पोषण देने वाले हे दिव्य प्रवाह ! हम आपका सान्निध्य पाना चाहते हैं। हमारी अधिकतम वृद्धि हो ॥१,५.३॥

ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम् ।
अपो याचामि भेषजम् ॥१,५.४॥

व्याधि निवारक दिव्य गुण वाले जल का हम आवाहन करते हैं। वह हमें सुख-समृद्धि प्रदान करे । उस औषधिरूप जल की हम प्रार्थना करते हैं ॥१,५.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ६- अपांभेषज (जल चिकित्सा) सूक्त

जल संसार का कल्याणकारी तत्त्व

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतयह ।
शं योरभि स्रवन्तु नः ॥१,६.१॥

दैवीगुणों से युक्त जल हमारे लिए हर प्रकार से कल्याणकारी तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाला हो। वह आकांक्षाओं की पूर्ति करके आरोग्यता प्रदान करे ॥१,६.१॥

अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा ।
अग्निं च विश्वशंभुवम् ॥१,६.२॥

सोमदेव का हमारे लिए उपदेश है कि दिव्य जल हर प्रकार से ओषधीय गुणों से युक्त है। उसमें कल्याणकारी अग्नि भी विद्यमान है ॥१,६.२॥

आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे मम ।
ज्योक्च सूर्यं दृशे ॥१,६.३॥

दीर्घकाल तक हम सूर्य को देखें अर्थात् दीर्घ जीवन प्राप्त करें । हे आपः ! शरीर को आरोग्यवर्द्धक दिव्य औषधियाँ प्रदान करो ॥१,६.३॥

शं न आपो धन्वन्याः शमु सन्त्वनूप्याः ।
शं नः खनित्रिमा आपः शमु याः कुम्भ आभृताः ।
शिवा नः सन्तु वार्षिकीः ॥१,६.४॥

मरु प्रदेश का जल हमारे लिए कल्याणकारी हो। जलमय देश का जल हमें सुख प्रदान करे। भूमि से खोदकर निकाला गया कुएँ आदि का जल हमारे लिए सुखप्रद हो।

पात्र में स्थित जल हमें शान्ति देने वाला हो । वर्षा से प्राप्त जल हमारे जीवन में सुख-शान्ति की वृष्टि करने वाला सिद्ध हो ॥१,६.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ७- यातुधाननाशन सूक्त

अग्नि और इंद्र की शक्ति का वर्णन

स्तुवानमग्न आ वह यातुधानं किमीदिनम् ।
त्वं हि देव वन्दितो हन्ता दस्योर्बभूविथ ॥१,७.१॥

हे अग्निदेव ! हम आपकी वन्दना करते हैं। दुष्टता को बढ़ाने वाले शत्रुओं को, आप अपने प्रभाव से पास बुलाएं। हमारे द्वारा वन्दित आप उनकी बुराइयों को नष्ट कर दें ॥१,७.१॥

आज्यस्य परमेष्ठिन् जातवेदस्तनूवशिन् ।
अग्ने तौलस्य प्राशान यातुधानान् वि लापय ॥१,७.२॥

उच्च पद पर आसीन, ज्ञान के पुंज, जठराग्नि के रूप में शरीर का सन्तुलन बनाने वाले हे अग्निदेव ! आप हमारे

द्वारा सुवापात्र से अर्पित की गई आज्याहुति को ग्रहण करें। हमारे स्नेह से प्रसन्न होकर आप दुष्ट-दुराचारियों को विलाप कराएँ अर्थात् उनका विनाश करें ॥१,७.२॥

वि लपन्तु यातुधाना अत्रिणो यह किमीदिनः ।
अथेदमग्ने नो हविरिन्द्रश्च प्रति हर्यतम् ॥१,७.३॥

दूसरों को पीड़ा पहुँचाने वाले, अपना स्वार्थ सिद्ध करने वाले समाज के शत्रुओं को अपना विनाश देखकर रुदन करने दें । हे अग्निदेव ! आप इन्द्र के साथ हमारे हविष्य को प्राप्त कर हमें सत्कर्म की ओर प्रेरित करें ॥१,७.३॥

अग्निः पूर्व आ रभतां प्रेन्द्रो नुदतु बाहुमान् ।
ब्रवीतु सर्वो यातुमान् अयमस्मीत्येत्य ॥१,७.४॥

पहले अग्निदेव उन पर आक्रमण प्रारम्भ करें, बलशाली इन्द्र उन्हें भगा कर दूर करें। इन दोनों के प्रभाव से असुर

स्वयं ही अपनी उपस्थिति स्वीकार करे आत्म समर्पण करें ॥१,७.४॥

पश्याम ते वीर्यं जातवेदः प्र णो ब्रूहि यातुधानान् नृचक्षः ।
त्वया सर्वे परितप्ताः पुरस्तात्त आ यन्तु प्रब्रुवाणा उपेदम् ॥१,७.५॥

हे ज्ञान स्वरूप अग्निदेव ! आपका प्रकाशरूपी पराक्रम हम देखें । आप पथभ्रष्टों के मार्गदर्शक हैं, अपने प्रभाव से दुष्टों को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करें । आपकी आज्ञा से तप्त असुर प्रायश्चित्त के लिए अपना परिचय देते हुए पास आ जाएं ॥१,७.५॥

आ रभस्व जातवेदोऽस्माकार्थाय जज्ञिषे ।
दूतो नो अग्ने भूत्वा यातुधानान् वि लापय ॥१,७.६॥

हे जातवेदः ! आप शुभ कर्मों का प्रारम्भ करें । हे अग्निदेव ! आप हमारे प्रतिनिधि बनकर दुष्टजनों को अपने किए गए

दुष्कर्मों पर रुलाएँ, उनका दमन करें क्योंकि इसके लिए ही आपका जन्म हुआ है ॥१,७.६॥

त्वमग्ने यातुधानान् उपबद्धामिहा वह ।
अथैषामिन्द्रो वज्रेणापि शीर्षाणि वृश्चतु ॥१,७.७॥

हे मार्गदर्शक अग्निदेव ! आप दुराचारियों को यहाँ आने के लिए बाध्य करें और इन्द्रदेव वज्र से उनके सिरों का उच्छेदन करे ॥१,७.७॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ८- यातुधाननाशन सूक्त

बृहस्पति, अग्नि एवं सोम से शत्रुओं को दंडित करने का आग्रह

इदं हविर्यातुधानान् नादी फेनमिवा वहत्।
य इदं स्त्री पुमान् अकरिह स स्तुवतां जनः ॥१,८.१॥

जिस प्रकार नदी झाग को बहा कर जल निर्मल देती है, उसी प्रकार यह 'हवि' पापाचारियों को यहाँ से दूर हटा कर ले जाए । दुष्कर्मों में लगे हुए स्त्री-पुरुष अपनी रक्षा के लिए तुम्हारी स्तुति करें ॥१,८.१॥

अयं स्तुवान आगमदिमं स्म प्रति हर्यत ।
बृहस्पते वशे लब्ध्वाग्नीषोमा वि विध्यतम् ॥१,८.२॥

प्रायश्चित्त की भावना से शरण में आए दुष्टों का स्वागत करें । हे मार्गदर्शक, ज्ञान के पुंज ! आप अपने सद्गुणों से उसे वश में करें । अग्नि और सोम उनका विशेष परीक्षण करें ॥१,८.२॥

यातुधानस्य सोमप जहि प्रजां नयस्व च ।
नि स्तुवानस्य पातय परमक्ष्युतावरम् ॥१,८.३॥

अमृत का पान कराने वाले हे सोम ! आसुरी वृत्तियों का समूल नाश हो, इसके लिए उसकी सन्तानों तक पहुँचकर आप उन्हें भी सन्मार्ग गामी बनाएँ। स्तुति करने वाले के नेत्रों को नीचा कर दें अर्थात नष्ट करें ॥१,८.३॥

यत्रैषामग्ने जनिमानि वेत्थ गुहा सतामत्त्रिणां जातवेदः ।
तांस्त्वं ब्रह्मणा वावृधानो जह्येषां शततर्हमग्ने ॥१,८.४॥

हे प्रकाशपुंज अग्ने ! आप पथभ्रष्ट जनों की सन्तानों तक सुदूर गुफा में पहुँच कर अपने दिव्य प्रकाश से उन्हें सन्मार्ग दिखाएँ, इस प्रकार आप सबके कष्टों को दूर करें ॥१,८.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ९ -विजय प्रार्थना सूक्त

वसु, इंद्र, पूषा, वरुण, मित्र, अग्नि एवं विश्वे देव से धन संपत्ति की कामना

अस्मिन् वसु वसवो धारयन्त्विन्द्रः पूषा वरुणो मित्रो अग्निः ।
इममादित्या उत विश्वे च देवा उत्तरस्मिन् ज्योतिषि धारयन्तु
॥१,९.१॥

ऐश्वर्य की कामना करने वाले इस पुरुष को आठों वसु, इन्द्र, पूषा, वरुण, मित्र, अग्नि आदि देवता धारण कर अपना अनुग्रह प्रदान करें । आदित्य और अन्य सभी देवता इसको तेजस्विता प्रदान करें ॥१,९.१॥

अस्य देवाः प्रदिशि ज्योतिरस्तु सूर्यो अग्निरुत वा हिरण्यम् ।

सपत्ना अस्मदधरे भवन्तूत्तमं नाकमधि रोहयहमम् ॥१,९.२॥

हे देवताओ ! सूर्य की तेजस्विता, अग्नि की प्रखरता, चन्द्र की शीतलता एवं स्वर्ण की आभा इस मनुष्य के जीवन को ऊँचा उठाए। अपने संयम से इन शक्तियों को बढ़ाता हुआ वह मनुष्य शत्रुओं अर्थात आसुरी वृत्तियों का विनाश करे । इस प्रकार वह जीवन की सर्वोच्च स्थिति को प्राप्त करे ॥१,९.२॥

यहनेन्द्राय समभरः पयांस्युत्तमेन ब्रह्मणा जातवेदः ।
तेन त्वमग्न इह वर्धयहमं सजातानां श्रैष्ठ्य आ धेह्येनम् ॥१,९.३॥

हे अग्निदेव ! जिस श्रेष्ठ ज्ञान के बल पर इन्द्र आदि देवता सम्पूर्ण रसों का उपभोग करते हैं, उसी दिव्य ज्ञान से मनुष्य के जीवन को प्रकाशित करते हुए आप ऊँचा उठाएँ, वह मनुष्य देवतुल्य श्रेष्ठ जीवन जिए ॥१,९.३॥

ऐषां यज्ञमुत वर्चो ददेऽहं रायस्पोषमुत चित्तान्यग्ने ।
सपत्ना अस्मदधरे भवन्तूत्तमं नाकमधि रोहयहमम् ॥१,९.४॥

हे अग्निदेव ! मैं इन राक्षसों के यज्ञ, धन, तेज, ऐश्वर्य एवं चित्त को स्वीकार करता हूँ। स्पर्धाशील शत्रु हमसे सदैव नीचे ही रहें । हे देव ! आप इस साधक को श्रेष्ठ सुख-शान्ति प्रदान करें ॥१,९.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १०- पाश विमोचन सूक्त

वरुण से जलोदर रोग से मुक्ति की कामना

अयं देवानामसुरो वि राजति वशा हि सत्या वरुणस्य राज्ञः।
ततस्परि ब्रह्मणा शाशदान उग्रस्य मन्योरुदिमं नयामि
॥१,१०.१॥

दुष्टों को दंड देने वाले देवताओं में राजा वरुणदेव प्रकाशित हैं। उनकी इच्छा ही सत्य है; तथापि हम दैवी ज्ञान के बल पर स्तुतियों द्वारा पीड़ित व्यक्तियों को उनके प्रकोप से बचाते हैं ॥१,१०.१॥

नमस्ते रजन् वरुणास्तु मन्यवे विश्वं ह्युग्र निचिकेषि द्रुग्धम्।
सहस्रमन्यान् प्र सुवामि साकं शतं जीवाति शरदस्तवायम्
॥१,१०.२॥

हे सर्वज्ञ वरुणदेव ! आपके कोप से पीड़ित हम सब आपके शरणागत होकर आपको नमन करते हैं; आप हमारे समस्त दोषों से भली-भाँति परिचित हैं । जन-मानस को बोध हो रहा है कि देवत्व की शरण में पहुंच कर ही सुखी और दीर्घ जीवन प्राप्त हो सकता है ॥१,१०.२॥

यदुवक्थानृतं जिह्वया वृजिनं बहु ।
राज्ञस्त्वा सत्यधर्मणो मुञ्चामि वरुणादहम् ॥१,१०.३॥

हे पीड़ित मानव ! तुमने अपनी वाणी का दुरुपयोग करते हुए असत्य और पाप वचन बोलकर अपनी स्थिति का हनन किया है । सर्व समर्थ वरुणदेव के अनुग्रह से इस दु:खद स्थिति से मैं तुम्हें मुक्त करता हूँ ॥१,१०.३॥

मुञ्चामि त्वा वैश्वानरादर्णवान् महतस्परि ।
सजातान् उग्रेहा वद ब्रह्म चाप चिकीहि नः ॥१,१०.४॥

हे पतित मानव ! हम तुम्हें नियन्ता वरुणदेव के प्रचण्ड कोप से मुक्त करता हैं । हे उग्रदेव ! आप अपने सजातीय दूतों से कह दें कि कह भी इसे पीड़ित न करें और आप भी हमारे द्वारा अर्पित हवि तथा स्तुतियों से प्रसन्न होकर हमारे अपराधों को क्षमा करें ॥१,१०.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ११- नारी सुख प्रसूति सूक्त

प्रसव देव पूषा से प्रसव वेदना से छुटकारा पाने का अनुरोध

वषट्ते पूषन्न् अस्मिन्त्सूतावर्यमा होता कृणोतु वेधाः ।
सिस्रतां नार्यृतप्रजाता वि पर्वाणि जिहतां सूतवा उ ॥१,११.१॥

हे अखिल विश्व के पोषक जनों के हितेषी पूषा देव ! हम अपनी हवि समर्पित करते हैं । आप इस प्रसृता की सहायता करें। यह सावधानीपूर्वक अपने अंगों को प्रसव के लिए तैयार करे । प्रसव काल में इसे कष्ट न हो। ॥१,११.१॥

चतस्रो दिवः प्रदिशश्चतस्रो भूम्या उत ।
देवा गर्भं समैरयन् तं व्यूर्णुवन्तु सूतवे ॥१,११.२॥

द्युलोक एवं भूमि को चारों दिशाएँ घेरे हुए हैं। दिव्य पंच भूतों ने इस गर्भ का आवरण किया हुआ है, वही इसे आवरण से बाहर निकालें ॥१,११.२॥

सूषा व्यूर्णोतु वि योनिं हापयामसि ।
श्रथया सूषणे त्वमव त्वं बिष्कले सृज ॥१,११.३॥

हे प्रसवशील माता! आप गर्भ को मुक्त करें। गर्भ मार्ग को हम खोलते हैं, आप भी अंगों को ढीला करें तथा गर्भ को नीचे की ओर प्रेरित करो ॥१,११.३॥

नेव मांसे न पीवसि नेव मज्जस्वाहतम् ।
अवैतु पृश्नि शेवलं शुने जराय्वत्तवेऽव जरायु पद्यताम् ॥१,११.४॥

गर्भस्थ शिशु को आवेष्टित करने वाले 'जरायु' प्रसूता के लियह मांस, मज्जा या चर्बी की भाँति उपयोगी नहीं, अपितु अन्दर रह जाने पर गम्भीर दुष्परिणाम प्रस्तुत करने वाली

सिद्ध होती है । सेवार (जल की घास) की जैसी नरम 'जेरी' पूर्णरूपेण बाहर आकर कुत्तों का आहार बने ॥१,११.४॥

वि ते भिनद्मि मेहनं वि योनिं वि गवीनिके ।
वि मातरं च पुत्रं च वि कुमारं जरायुणाव जरायु पद्यताम् ॥१,११.५॥

हे प्रसूता ! निर्विघ्न प्रसव के लिए गर्भमार्ग, योनि एवं नाड़ियों को विशेष प्रकार से खोलता हूँ । माँ व बालक को नाल से अलग करता हूँ । जरायु से शिशु को अलग करता हूँ । यह जरायु भी उदार से निकल कर पूर्णरूपेण से पृथ्वी पर गिर जाए ॥१,११.५॥

यथा वातो यथा मनो यथा पतन्ति पक्षिणः ।
एवा त्वं दशमास्य साकं जरायुणा पताव जरायु पद्यताम् ॥१,११.६॥

जिस प्रकार वायु वेगपूर्वक प्रवाहित होती है। पक्षी जिस वेग से आकाश में उड़ते हैं एवं मन जिस तीव्रगति से विषयों में

लिप्त होता है, उसी प्रकार दसवें माह में गर्भस्थ जरायु के साथ गर्भ से मुक्त होकर बाहर आए ॥१,११.६॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १२- यक्ष्मनाशन सूक्त

विभिन्न रोगों से छुटकारा पाने के लिए सूर्य की चरु आदि से प्रशंसा

जरायुजः प्रथम उस्रियो वृषा वाताभ्रजा स्तनयन्न् एति वृष्ट्या ।
स नो मृडाति तन्व ऋजुगो रुजन् य एकमोजस्त्रेधा विचक्रमे ॥१,१२.१॥

जरायु से उत्पन्न शिशु के समान तीव्रगामी एवं पराक्रमी बलशाली सूर्यदेव वायु के प्रभाव से मेघों के बीच से प्रकट होकर हमारे शरीरों को हर्षित करते हैं। वह सीधे मार्ग से चलते हुए अपने एक ही ओज़ को तीन प्रकार से विभाजित करते हैं ॥१,१२.१॥

अङ्गेःअङ्गे शोचिषा शिश्रियाणं नमस्यन्तस्त्वा हविषा विधेम ।

अङ्कान्त्समङ्कान् हविषा विधेम यो अग्रभीत्पर्वास्या ग्रभीता ॥१,१२.२॥

अपनी ऊर्जा से अंग-प्रत्यंग में संव्याप्त हे सूर्यदेव ! स्तुतियों एवं हवि द्वारा हम आपको और आपके समीपवर्ती देवों की अर्चना करते हैं। रोगों से ग्रसित इस मनुष्य के रोग निर्वाण के लिए भी हम आपको पूजते हैं ॥१,१२.२॥

मुञ्च शीर्षक्त्या उत कास एनं परुष्परुराविवेशा यो अस्य । यो अभ्रजा वातजा यश्च शुष्मो वनस्पतीन्त्सचतां पर्वतांश्च ॥१,१२.३॥

हे आरोग्यदाता सूर्यदेव ! आप हमें सिरदर्द एवं खाँसी की पीड़ा से मुक्त करें। सन्धियों में घुसे रोगाणुओं को नष्ट करें । वर्षा, शीत एवं ग्रीष्म ऋतुओं के प्रभाव से उत्पन्न होने वाले वात, पित्त, कफ जनित रोगों को दूर करें । इसके लिए हम अनुकूल वातावरण के रूप में पर्वतों एवं वनौषधियों का सहारा लेते हैं ॥१,१२.३॥

शं मे परस्मै गात्राय शमस्त्ववराय मे ।
शं मे चतुर्भ्यो अङ्गेभ्यः शमस्तु तन्वे मम ॥१,१२.४॥

हमारे अन्य श्रेष्ठ अंगों का कल्याण हो । हमारे उदर आदि साधारण अंगों का कल्याण हो। हमारे चारों अंगों (दो हाथों एवं दो पैरों) का कल्याण हो। हमारे समस्त शरीर को आरोग्य – लाभ प्राप्त हो ॥१,१२.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १३- विद्युत् सूक्त

पर्जन्य की स्तुति

नमस्ते अस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे ।
नमस्ते अस्त्वशमने यहना दूडाशे अस्यसि ॥१,१३.१॥

विद्युत् को हमारा नमस्कार पहुँचे। गड़गड़ाहट करने वाले शब्द तथा अशनि को हमारा नमस्कार पहुँचे । आकाश में व्याप्त मेघों को हमारा नमस्कार पहुँचे । हे देवि ! वज्र के लिए मेरा प्रमाण पहुंचे जो दुष्टों पर प्रहार करके उन्हें दूर हटाती हैं ॥१,१३.१॥

नमस्ते प्रवतो नपाद्यतस्तपः समूहसि ।
मृडया नस्तनूभ्यो मयस्तोकेभ्यस्कृधि ॥१,१३.२॥

हे पर्जन्य देव! आप जल को अपने अन्दर ग्रहण किए रहते हैं और असमय नीचे नहीं गिरने देते । हम आपको प्रणाम करते हैं; क्योंकि आप सत्पुरुषों के रक्षा करने वाले हैं! आप हमारे देह को सुख प्रदान करें तथा हमारी सन्तानों को भी सुख प्रदान करें ॥१,१३.२॥

प्रवतो नपान् नम एवास्तु तुभ्यं नमस्ते हेतयह तपुषे च कृण्मः ।
विद्म ते धाम परमं गुहा यत्समुद्रे अन्तर्निहितासि नाभिः ॥१,१३.३॥

ऊँचाई से न गिराने वाले हे पर्जन्य ! आपको हम प्रणाम करते हैं। आपके आयुध तथा तेजस् को भी हम प्रणाम करते हैं। हे गुफा के सामान अगम्य, आप जिस हृदयरूपी गुफा में निवास करते हैं, वह हमें ज्ञात हैं । आप उस अन्तरिक्ष रुपी समुद्र में नाभि के सदृश विद्यमान रहते हैं ॥१,१३.३॥

यां त्वा देवा असृजन्त विश्व इषुं कृण्वाना असनाय धृष्णुम् ।

सा नो मृड विदथे गृणाना तस्यै ते नमो अस्तु देवि ॥१,१३.४॥

हे देवी अशनि ! शत्रुओं पर प्रहार करने के लिए समस्त देवताओं ने बलशाली बाण के रूप में आपकी संरचना की हैं । अन्तरिक्ष में गर्जना करने वाले हे अशनि ! हम आपको नमस्कार करते हैं। आप हमारे भय को दूर करके हमें हर्ष प्रदान करें ॥१,१३.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १४- कुलपाकन्या सूक्त

यम और सोम की प्रशंसा

भगमस्या वर्च आदिष्यधि वृक्षादिव स्रजम् ।
महाबुध्न इव पर्वतो ज्योक्पितृष्वास्ताम् ॥१,१४.१॥

वृक्षों से जैसे मनुष्य फूल ग्रहण करते हैं, उसी प्रकार इस कन्या के सौन्दर्य तथा ओज को हम स्वीकार करते हैं। जिस तरह विशाल पर्वत धरती पर स्थिर रहता है, उसी प्रकार यह कन्या भयरहित होकर अपने माता-पिता के निवास स्थान पर बहुत समय तक रहे ॥१,१४.१॥

एषा ते राजन् कन्या वधूर्नि धूयतां यम ।
सा मातुर्बध्यतां गृहेऽथो भ्रातुरथो पितुः ॥१,१४.२॥

हे नियम पालन करने वाले प्रकाशवान्! यह कन्या आपकी वधू बनकर आचरण करे। यह कन्या आपके घर में रहे, माता-पिता अथवा भाई के घर में सुखपूर्वक रहे ॥१,१४.२॥

एषा ते कुलपा राजन् तामु ते परि दद्मसि ।
ज्योक्पितृष्वासाता आ शीर्ष्णः शमोप्यात्॥१,१४.३॥

हे राजन्! यह कन्या आपकी कुलवधु है, इसे हम पुनः आपको समर्पित करते हैं। यह निरंतर अपने सम्बन्धियों के बीच रहे । शीर्ष से शान्ति एवं कल्याण के बीज बोए ॥१,१४.३॥

असितस्य ते ब्रह्मणा कश्यपस्य गयस्य च ।
अन्तःकोशमिव जामयोऽपि नह्यामि ते भगम् ॥१,१४.४ ॥

हे कन्ये! आपके सौभाग्य को हम "असित' ऋषि, "गय' ऋषि तथा 'कश्यप' ऋषि के मंत्र के द्वारा उसी प्रकार बाँधकर सुरक्षित करते हैं, जिस प्रकार स्त्रियाँ अपने वस्त्रों-आभूषणों आदि को गुप्त रखकर सुरक्षित करती हैं ॥१,१४.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १५- पुष्टिकर्म सूक्त

सिंधु और पवन आदि की प्रशंसा

सं सं स्रवन्तु सिन्धवः सं वाताः सं पतत्रिणः ।
इमं यज्ञं प्रदिवो मे जुषन्तां संस्राव्येण हविषा जुहोमि ॥१,१५.१॥

नदियाँ और वायु भली-भाँति संयुक्त होकर प्रवाहित होती रहें तथा पक्षीगण भली-भाँति संयुक्त होकर उड़ते रहें । देवगण हमारे यज्ञ को ग्रहण करें, क्योंकि हम हविष्यों को संगठित-एकीकृत करके आहुतियाँ दे रहे हैं ॥१,१५.१॥

इहैव हवमा यात म इह संस्रावणा उतेमं वर्धयता गिरः ।
इहैतु सर्वो यः पशुरस्मिन् तिष्ठतु या रयिः ॥१,१५.२॥

हे संगठित करने वाले देवताओ ! आप यहाँ हमारे इस यज्ञ में पधारें और इस संगठन का संवर्द्धन करें । प्रार्थनाओं को ग्रहण करने पर आप इस हवि प्रदाता यजमान को प्रजा, पशु आदि सम्पत्ति से सम्पन्न करें ॥१,१५.२॥

यह नदीनां संस्रवन्त्युत्सासः सदमक्षिताः ।
तेभिर्मे सर्वैः संस्रावैर्धनं सं स्रावयामसि ॥१,१५.३॥

सरिताओं के जो अक्षय स्रोत अवाधगति से प्रवाहित हो रहे हैं, उन सब स्रोतों द्वारा हम पशु आदि धन-सम्पत्तियाँ प्राप्त करते हैं ॥१,१५.३॥

यह सर्पिषः संस्रवन्ति क्षीरस्य चोदकस्य च
तेभिर्मे सर्वैः संस्रावैर्धनं सं स्रावयामसि ॥१,१५.४॥

जो घृत, दुग्ध तथा जल की धाराएँ प्रवाहित हो रही हैं, उन समस्त धाराओं द्वारा हम धन-सम्पत्तियाँ प्राप्त करते हैं ॥१,१५.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १६- शत्रुबाधन सूक्त

अग्नि और वरुण देव से चोरों का संहार करने का अनुरोध

यहऽमावास्यां रात्रिमुदस्थुर्व्राजमत्क्षिणः ।
अग्निस्तुरीयो यातुहा सो अस्मभ्यमधि ब्रवत्॥१,१६.१॥

अमावस्या की अँधेरी रात के समय मनुष्यों पर घात करने वाले तथा उनको क्षति पहुँचाने वाले, जो असुर आदि विचरण करते हैं, उन असुरों के सम्बन्ध में अग्निदेव हमें जानकारी प्रदान करें ॥१,१६.१॥

सीसायाध्याह वरुणः सीसायाग्निरुपावति ।
सीसं म इन्द्रः प्रायछत्तदङ्ग यातुचातनम् ॥१,१६.२॥

वरुणदेव ने सीसे के सम्बन्ध में कहा है कि यह मेरा है। अग्निदेव उस 'सीसे' को मुनष्यों की सुरक्षा करने वाला

बताते हैं। धनवान् इन्द्र ने हमें 'सीसा' प्रदान करते हुए कहा है-हे आत्मीय ! देवों द्वारा प्रदत्त यह 'सीसा असुरों का निवारण करने वाला है ॥१,१६.२॥

इदं विष्कन्धं सहत इदं बाधते अत्रिणः ।
अनेन विश्वा ससहे या जातानि पिशाच्याः ॥१,१६.३॥

यह 'सीसा' अवरोध उत्पन्न करने वालों को हटाता है तथा असुरों को पीड़ा पहुँचाता है । इसके द्वारा असुरों की समस्त जातियों को हम दूर करते हैं ॥१,१६.३॥

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम् ।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा ॥१,१६.४॥

यदि तुम हमारी गौओं, अश्वों तथा मनुष्यों का संहार करते हो, तो हम तुम्हे सीसे के द्वारा वेधते हैं। जिससे तुम हमारे वीरों का संहार न कर सको ॥१,१६.४॥

सूक्त १७- रुधिरस्रावर्निवर्तनधमनीबन्धन सूक्त

स्त्री की रक्त प्रवाहिनी का वर्णन

अमूर्या यन्ति योषितो हिरा लोहितवाससः ।
अभ्रातर इव जामयस्तिष्ठन्तु हतवर्चसः ॥१,१७.१॥

शरीर में लाल रंग के रक्त का वहन करने वाली जो धमनियाँ हैं, वह स्थिर हो जाएँ। जिस प्रकार भाई रहित निस्तेज बहनें बाहर नहीं निकलतीं, उसी प्रकार धमनियों स्थिर रहें तथा रक्त बाहर न निकले ॥१,१७.१॥

तिष्ठावरे तिष्ठ पर उत त्वं तिष्ठ मध्यमे ।
कनिष्ठिका च तिष्ठति तिष्ठादिद्धमनिर्महीं ॥१,१७.२॥

हे शरीर में स्थित, नीचे, ऊपर तथा मध्य वाली धमनियों ! आप स्थिर हो जाएँ । छोटी तथा बड़ी सभी धमनियाँ भी रक्त प्रवाहित करना बन्द करके स्थिर हो जाएँ ॥१,१७.२॥

शतस्य धमनीनां सहस्रस्य हिराणाम् ।
अस्थुरिन् मध्यमा इमाः साकमन्ता अरंसत ॥१,१७.३॥

सैकड़ों धमनियों तथा सैकड़ों नाड़ियों के मध्य में मध्यम नाड़ियाँ स्थिर हो गई हैं और इसके साथ-साथ अन्तिम धमनियाँ भी ठीक हो गई हैं, जिसका रक्त स्राव बन्द हो गया है ॥१,१७.३॥

परि वः सिकतावती धनूर्बृहत्यक्रमीत्।
तिष्ठतेलयता सु कम् ॥१,१७.४॥

हे नाड़ियो ! आपको रज नाड़ी ने और धनुष की तरह वक्र धनु नाड़ी ने तथा बृहती नाड़ी ने चारों तरफ से संव्याप्त कर लिया है। आप रक्त स्राव बन्द करें और इसे रोगी को सुख प्रदान करें ॥१,१७.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १८- अलक्ष्मीनाशन सूक्त

सविता, वरुण मित्र, अर्यमा आदि देवों की स्तुति

निर्लक्ष्म्यं ललाम्यं निररातिं सुवामसि ।
अथ या भद्रा तानि नः प्रजाया अरातिं नयामसि ॥१,१८.१॥

मस्तक पर स्थित दुर्भाग्य सूचक चिन्हों को हम पूर्ण रूप से दूर करते हैं तथा जो हितकारक लक्षण हैं , उन्हें हम अपने लिए तथा अपनी सन्तानों के लिए प्राप्त करते हैं। इसके अलावा कृपणता आदि बुरे लक्षणों को दूर भागते हैं ॥१,१८.१॥

निररणिं सविता साविषक्पदोर्निर्हस्तयोर्वरुणो मित्रो अर्यमा ।
निरस्मभ्यमनुमती रराणा प्रेमां देवा असाविषुः सौभगाय ॥१,१८.२॥

मित्र वरुण, सविता देव तथा अर्यमा देव हमारे हाथों और पैरों के बुरे लक्षणों को दूर करें । सबकी प्रेरक अनुमति भी वांछित फल प्रदान करती हुई शरीर के बुरे लक्षणों को दूर करे। देवों ने भी इसी सौभाग्य को प्रदान करने के लिए प्रेरणा दी है ॥१,१८.२॥

यत्त आत्मनि तन्वां घोरमस्ति यद्वा केशेषु प्रतिचक्षणे वा ।
सर्वं तद्वाचाप हन्मो वयं देवस्त्वा सविता सूदयतु ॥१,१८.३॥

हे बुरे लक्षणों से युक्त मनुष्यो ! आपकी आत्मा, शरीर, बाल तथा आँखों में जो वीभत्सता का कुलक्षण है, उन सबको हम मन्त्रों का उच्चारण करके दूर करते हैं। सविता देवता आपको परिपक्व बनाएँ ॥१,१८.३॥

रिश्यपदीं वृषदतीं गोषेधां विधमामुत ।
विलीढ्यं ललाम्यं ता अस्मन् नाशयामसि ॥१,१८.४॥

ऐसी स्त्री जिसका पैर हिरण की तरह, दाँत बैल की तरह, चाल गाय की तरह तथा आवाज कठोर है, हम उसके मस्तक पर स्थित ऐसे सभी बुरे लक्षणों को मन्त्रों द्वारा दूर करते हैं ॥१,१८.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १९- शत्रुनिवारण सूक्त

इंद्र आदि देवों को शत्रुओं से रक्षा करने का आग्रह

मा नो विदन् विव्याधिनो मो अभिव्याधिनो विदन् ।
आराच्छरव्या अस्मद्विषूचीरिन्द्र पातय ॥१,१९.१॥

हथियारों द्वारा घायल करने वाले शत्रु हमारे समीप तक न पहुँच पाएँ तथा चारों तरफ से संहार करने वाले शत्रु भी हमारे पास न पहुँच पाएँ । हे इन्द्र ! चारों ओर फैल जाने वाले बाणों को आप हमसे दूर गिराएँ ॥१,१९.१॥

विष्वञ्चो अस्मच्छरवः पतन्तु यह अस्ता यह चास्याः ।
दैवीर्मनुष्येसवो ममामित्रान् वि विध्यत ॥१,१९.२॥

चारों तरफ फैले हुए बाण जो चलाए जा चुके हैं तथा जो चलाए जाने वाले हैं,वह सभी हमारे स्थान से दूर गिरें । हे मनुष्यों के द्वारा संचालित तथा दैवी बाणो ! आप हमारे शत्रुओं को विदीर्ण कर डालें ॥१,१९.२॥

यो नः स्वो यो अरणः सजात उत निष्ट्यो यो अस्मामभिदासति ।
रुद्रः शरव्ययैतान् ममामित्रान् वि विध्यतु ॥१,१९.३॥

जो हमारे स्वजन हों या दूसरे अन्य लोग हों अथवा सजातीय हों या दूसरी जाति वाले हीन लोग हों; यदि वह हमारे ऊपर आक्रमण करके हमें दास बनाने का प्रयत्न करें, तो उन शत्रुओं को रुद्रदेव अपने बाणों से विदीर्ण करें ॥१,१९.३॥

यः सपत्नो योऽसपत्नो यश्च द्विषन् छपाति नः ।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ॥१,१९.४॥

जो हमारे सामने प्रकट अथवा गुप्त शत्रु विद्वेष भाव से हमारा संहार करने का प्रयत्न करते हैं या हमें अभिशापित करते हैं, उन शत्रुओं को समस्त देवगण विनष्ट करें। ब्रह्मज्ञान रूपी कवच हमारी सुरक्षा करे ॥१,१९.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २०- शत्रुनिवारण सूक्त

सोम, इंद्र और वरुण देव से शत्रुओं द्वारा छोड़े गए आयुधों को निष्काम करने का आग्रह

अदारसृद्भवतु देव सोमास्मिन् यज्ञे मरुतो मृडता नः ।
मा नो विददभिभा मो अशस्तिर्मा नो विदद्वृजिना द्वेष्या या ॥१,२०.१॥

हे सोमदेव ! परस्पर वैमनस्य उत्पन्न करने का कृत्य हमसे न हो। हे मरुतो ! हम जिस यज्ञ का अनुष्ठान कर रहे हैं, आप उसमें हमें हर्षित करें । सामने आता हुए शत्रु का तेज हमारे समीप न आ सके तथा अपकीर्ति भी हमें न प्राप्त हो । इच्छित मार्ग में जो विद्वेषवर्द्धक कुटिल कृत्य हैं, वह भी हमारे समीप न आ सकें ॥१,२०.१॥

यो अद्य सेन्यो वधोऽघायूनामुदीरते ।

युवं तं मित्रावरुणावस्मद्यावयतं परि ॥१,२०.२॥

हे मित्र और वरुणदेवो ! शत्रुओं द्वारा छोड़े गए शस्त्रों को आप हमसे दूर रखें, जिससे वह हमें स्पर्श न कर सके। आज संग्राम में हिंसा की अभिलाषा से संधान किए गए शत्रुओं के अस्त्रों को हमसे दूर रखने का उपाय करें ॥१,२०.२॥

इतश्च यदमुतश्च यद्वधं वरुण यावय ।
वि महच्छर्म यछ वरीयो यावया वधम् ॥१,२०.३॥

हे वरुणदेव ! समीप में खड़े हुए तथा दूर में स्थित शत्रुओं के जो शर, संहार करने के उद्देश्य से हमारे पास आ रहे हैं, उन छोड़े गए अस्त्र-शस्त्रों को आप हमसे पृथक् करें । हे वरुणदेव ! शत्रुओं द्वारा अप्राप्त बृहत् सुखों को आप में प्रदान करें तथा उनके कठोर आयुधों को हमसे पृथक् करें ॥१,२०.३॥

शास इत्था महामस्यमित्रसाहो अस्तृतः ।
न यस्य हन्यते सखा न जीयते कदा चन ॥१,२०.४॥

हे शासक इन्द्रदेव ! आपकी शत्रु हनन की क्षमता महान् और अद्‌भुत है, आपके मित्र भी कभी मृत्यु को प्राप्त नहीं होते और न कभी शत्रुओं से पराभूत होते हैं ॥१,२०.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २१- शत्रुनिवारण सूक्त

इंद्र देव से शत्रुओं का विनाश करने के लिए आग्रह

स्वस्तिदा विशां पतिर्वृत्रहा विमृधो वशी ।
वृषेन्द्रः पुर एतु नः सोमपा अभयंकरः ॥१,२१.१॥

इन्द्रदेवपरम कल्याणकारी, प्रजाजनों का पालन करने वाले, वृत्र असुर का विनाश करने वाले, युद्धकर्ता शत्रुओं को वशीभूत करने वाले, साधकों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले, सोमपान करने वाले और अभय प्रदान करने वाले हैं। वह संग्राम में हमारा रक्षण करते हुए हमारे समक्ष पधारें ॥१,२१.१॥

वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यछ पृतन्यतः ।
अधमं गमया तमो यो अस्मामभिदासति ॥१,२१.२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे शत्रुओं का विनाश करें । हमारी सेनाओं द्वारा पराजित शत्रुओं को मुँह नीचा किए हुए भागने दें । हमें वश में करने के इच्छुक शत्रुओं को गहरे अन्धकार में डालें ॥१,२१.२॥

वि रक्षो वि मृधो जहि वि वृत्रस्य हनू रुज ।
वि मन्युमिन्द्र वृत्रहन्न् अमित्रस्याभिदासतः ॥१,२१.३॥

हे वृत्रासुर के संहारक इन्द्रदेव ! आप राक्षसों का विनाश करें। हिंसक दुष्टों को नष्ट करें । वृत्रासुर का जबड़ा तोड़ दें । हे शत्रु नाशक इन्द्रदेव ! आप हमारे संहारक शत्रुओं के क्रोध एवं दर्प को नष्ट करें ॥१,२१.३॥

अपेन्द्र द्विषतो मनोऽप जिज्यासतो वधम् ।
वि महच्छर्म यछ वरीयो यावया वधम् ॥१,२१.४॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारा संहार करने के अभिलाषी शत्रुओं को नष्ट करें । शत्रुओं के मनों का दमन करें । शत्रुओं के क्रोध से हमारी रक्षा करते हुए हमें श्रेष्ठ सुख प्रदान करें । शत्रु से प्राप्त मृत्यु का निवारण करें ॥१,२१.४॥

सूक्त २२- हृद्रोगकामलानाशन सूक्त

हृदय रोग निवारण हेतु सूर्य देव की स्तुति

अनु सूर्यमुदयतां हृद्द्योतो हरिमा च ते ।
गो रोहितस्य वर्णेन तेन त्वा परि दध्मसि ॥१,२२.१॥

हे रोगग्रस्त मनुष्य ! सूर्य के उदय होते ही हृदय रोग एवं पाण्डु रोग के कारण उत्पन्न तेरे शरीर का पीलापन, सूर्य की ओर चला जाए। रक्तवर्ण की गौओं अथवा सूर्य की रक्तवर्ण की रश्मियों के द्वारा हम आपको हर प्रकार से बलिष्ठ बनाते हैं ॥१,२२.१॥

परि त्वा रोहितैर्वर्णैर्दीर्घायुत्वाय दध्मसि ।
यथायमरपा असदथो अहरितो भुवत्॥१,२२.२॥

हे व्याधिग्रस्त मनुष्य ! दीर्घायुष्य प्राप्त करने के लिए हम तुझे लोहित वर्ण के द्वारा आवृत करते हैं, जिसमें आप रोगरहित होकर पाण्डु रोग से विमुक्त हो सकें ॥१,२२.२॥

या रोहिणीर्देवत्या गावो या उत रोहिणीः ।
रूपंरूपं वयोवयस्ताभिष्ट्वा परि दध्मसि ॥१,२२.३॥

देवताओं की जो रक्तवर्ण की गौएँ हैं अथवा रक्तवर्ण की रश्मियाँ हैं, उनके विभिन्न स्वरूपों और आयुष्यवर्द्धक गुणों से तुझे आच्छादित करते हैं ॥१,२२.३॥

शुकेषु ते हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि ।
अथो हारिद्रवेषु ते हरिमाणं नि दध्मसि ॥१,२२.४॥

हम अपने हरिमाण पीलिया अथवा शरीर को क्षीण करने वाले रोग को तोतों और वृक्षों एवं हरिद्रवों अर्थात हरी वनस्पतियों में स्थापित करते हैं ॥१,२२.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २३- श्वेत कुष्ठ नाशन सूक्त

हरिद्रा, इंद्रावारुणि आदि ओषधि का वर्णन

नक्तंजातासि औषधे रामे कृष्णे असिक्नि च ।
इदं रजनि रजय किलासं पलितं च यत्॥१,२३.१॥

हे हरिद्रा नामक तथा असिनी औषधियो ! आप सब रात्रि में पैदा हुई हैं। रंग प्रदान करने वाली है। औषधियो ! आप गलित कुष्ठ तथा श्वेतकुष्ठग्रस्त व्यक्ति को रंग प्रदान करें ॥१,२३.१॥

किलासं च पलितं च निरितो नाशया पृषत्।
आ त्वा स्वो विशतां वर्णः परा शुक्लानि पातय ॥१,२३.२॥

हे औषधियो ! आप कुष्ठ, श्वेतकुष्ठ तथा धब्बे आदि को विनष्ट करें, जिससे इस व्याधिग्रस्त मनुष्य के शरीर में पूर्व जैसी

लालिमा प्रवेश करे। आप सफेद दाग को दूर करके इस रोगी को अपना रंग प्रदान करें ॥१,२३.२॥

असितं ते प्रलयनमास्थानमसितं तव ।
असिक्नी अस्योषधे निरितो नाशया पृषत्॥१,२३.३॥

हे नील औषधे ! आपके पैदा होने का स्थान कृष्ण वर्ण है तथा जिस पात्र में आप स्थित रहती हैं, वह भी कृष्ण है। हे औषधे ! आप स्वयं श्याम वर्ण वाली हैं तथा आप जिनके संपर्क में आती हैं उन्हें भी अपने वर्ण वाला बना देती हैं , अत: इस रोगी के कुष्ठ आदि धब्बों को नष्ट कर दें ॥१,२३.३॥

अस्थिजस्य किलासस्य तनूजस्य च यत्त्वचि ।
दूष्या कृतस्य ब्रह्मणा लक्ष्म श्वेतमनीनशम् ॥१,२३.४॥

शरीर में विद्यमान अस्थि और त्वचा के मध्य के मांस में तथा त्वचा पर जो श्वेत कुष्ठ का निशान है, उसे हमने ब्रह्म ज्ञान के प्रयोग के द्वारा विनष्ट कर दिया है ॥१,२३.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २४- श्वेतकुष्ठ नाशन सूक्त

आसुरी माया से उत्पन्न वनस्पति का वर्णन

सुपर्णो जातः प्रथमस्तस्य त्वं पित्तमासिथ ।
तदासुरी युधा जिता रूपं चक्रे वनस्पतीन् ॥१,२४.१॥

हैं औषधे ! सर्वप्रथम आप सुन्दर पंखों वाले गरुड़ में के पित्तरूप से विद्यमान थीं। आसुरों ने गरुडों के साथ संग्राम जीतकर उस पित्त को औषधि का स्वरूप प्रदान किया। वहीं रूप नील आदि औषधि में प्रविष्ट किया है ॥१,२४.१॥

आसुरी चक्रे प्रथमेदं किलासभेषजमिदं किलासनाशनम् ।
अनीनशत्किलासं सरूपामकरत्त्वचम् ॥१,२४.२॥

उस आसुरी माया ने नील आदि औषधि को कुष्ठ निवारक औषधि के रूप में विनिर्मित किया था। यह औषधि कुष्ठ नष्ट करने वाली है। प्रयोग किए जाने पर इसने कुष्ठ रोग को विनष्ट किया । इसने दूषित त्वचा को रोग सामान्य त्वचा के रंग वाली कर दिया ॥१,२४.२॥

सरूपा नाम ते माता सरूपो नाम ते पिता ।
सरूपकृत्त्वमोषधे सा सरूपमिदं कृधि ॥१,२४.३॥

हे औषधे ! आपकी माता आपके समान वर्ण वाली है तथा आपके पिता भी आपके समान वर्ण वाले हैं और आप भी समान रूप करने वाली हो । इसलिए हे नील औषधे ! आप इस कुष्ठ रोग से दूषित रंग को अपने समान रंग रूप वाला करें ॥१,२४.३॥

श्यामा सरूपंकरणी पृथिव्या अध्युद्भृता ।
इदमू षु प्र साधय पुना रूपाणि कल्पय ॥१,२४.४॥

काले रंग वाली औषधे ! आप समान रूप बनाने वाली हो। आसुरी माया ने आपको धरती के ऊपर पैदा किया है। आप इस कुष्ठ रोग ग्रस्त अंग को भली प्रकार रोगमुक्त करके पहले जैसा बना दें ॥१,२४.४॥

सूक्त २५- ज्वर नाशन सूक्त

यक्ष्मा नाशक अग्नि की स्तुति

यदग्निरापो अदहत्प्रविश्य यत्राकृण्वन् धर्मधृतो नमांसि ।
तत्र त आहुः परमं जनित्रं स नः संविद्वान् परि वृङ्ग्धि तक्मन् ॥१,२५.१॥

हे कष्ट देने वाले ज्वर ! जहाँ पर धर्म का आचरण करने वाले सदाचारी मनुष्य नमन करते हैं, जहाँ प्रविष्ट होकर अग्निदेव, प्राण धारण करने वाले जल तत्त्व को जलाते हैं, वहीं पर आपका वास्तविक जन्म स्थान है, ऐसा आपके बारे में कहा जाता हैं । हे कष्टप्रदायक ज्वर ! यह सब भली भांति जानकर आप हमें रोग मुक्त कर दें ॥१,२५.१॥

यद्यर्चिर्यदि वासि शोचिः शकल्येषि यदि वा ते जनित्रम् ।
ह्रूडुर्नामासि हरितस्य देव स नः संविद्वान् परि वृङ्ग्धि तक्मन् ॥१,२५.२॥

हे जीवन को कष्टमय करने वाले ज्वर ! यदि आप दाहकता के गुण से सम्पन्न हैं तथा शरीर को संताप देने वाले हैं, यदि आपका जन्म लकड़ी के टुकड़ों की कामना करने वाले अग्निदेव से हुआ है, तो आप 'हूड' नाम वाले हैं । हे पीलापन उत्पन्न करने वाले ज्वर ! आप अपने कारण अग्निदेव को जानते हुए हमें मुक्त कर दें ॥१,२५.२॥

यदि शोको यदि वाभिशोको यदि वा राज्ञो वरुणस्यासि पुत्रः ।
ह्रूडुर्नामासि हरितस्य देव स नः संविद्वान् परि वृङ्ग्धि तक्मन् ॥१,२५.३॥

हे जीवन को कष्टमय बनाने वाले ज्वर ! यदि आप शरीर में कष्ट देने वाले हैं अथवा सब जगह पीड़ा उत्पन्न करने वाले हैं अथवा दुराचारियों को दण्डित करने वाले वरुणदेव के

पुत्र हैं, तो भी आपका नाम 'हूड' है । आप अपने कारण अग्निदेव को जानकर हम सबको मुक्त कर दें ॥१,२५.३॥

नमः शीताय तक्मने नमो रूराय शोचिषे कृणोमि ।
यो अन्येद्युरुभयद्युरभ्येति तृतीयकाय नमो अस्तु तक्मने ॥१,२५.४॥

शीत पैदा करने वाले शीत ज्वर के लिए हमारा नमन है और रूखे ताप को उत्पन्न करने वाले ज्वर को हमारा नमन है । एक दिन का अन्तर देकर आने वाले, दूसरे दिन आने वाले तथा तीसरे दिन आने वाले शीत ज्वर को हमारा नमन है ॥१,२५.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २६- सुख प्राप्ति सूक्त

इंद्र, मरुत व पर्जन्य देव की स्तुति

आरेऽसावस्मदस्तु हेतिर्देवासो असत्।
आरे अश्मा यमस्यथ ॥१,२६.१॥

हे देवो ! शत्रुओं द्वारा छोड़े गए यह अस्त्र हमारे पास न आएँ तथा आपके द्वारा फेंके गए पत्थर भी हमारे पास न आएँ ॥१,२६.१॥

सखासावस्मभ्यमस्तु रातिः सखेन्द्रो भगः ।
सविता चित्रराधाः ॥१,२६.२॥

दान देने वाले, ऐश्वर्य – सम्पन्न सवितादेव तथा विचित्र धन से सम्पन्न इन्द्रदेव तथा भगदेव हमारे सखा हों ॥१,२६.२॥

यूयं नः प्रवतो नपान् मरुतः सूर्यत्वचसः ।

शर्म यछथ सप्रथाः ॥१,२६.३॥

पृथ्वी से सूर्य द्वारा खींचे गए जल को नियत समय तक धारण करने वाले पर्जन्य अपने आप की सुरक्षा करने वाले, न गिराने वाले हे सूर्य की तरह तेजयुक्त मरुतो ! आप सब हमारे निमित्त प्रचुर सुख प्रदान करें ॥१,२६.३॥

सुषूदत मृडत मृडया नस्तनूभ्यो ।
मयस्तोकेभ्यस्कृधि ॥१,२६.४॥

इन्द्रादि देवता हमें आश्रय प्रदान करें तथा हमें हर्षित करें । वह हमारे शरीरों को आरोग्य प्रदान करें तथा हमारे संतति को सुख प्रदान करें ॥१,२६.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २७- स्वस्त्ययन सूक्त

शत्र सेना को पराजित और अपनी सेना को आगे बढ़ाने के लिए इंद्राणी की स्तुति

अमूः पारे पृदाकस्त्रिषप्ता निर्जरायवः ।
तासां जरायुभिर्वयमक्ष्यावपि व्ययामस्यघायोः परिपन्थिनः ॥१,२७.१॥

जरायु निकलकर पार हुई यह त्रिसप्त (तीन और सात) सर्पिणियाँ गतिशील सेनाएँ या शक्ति धाराएँ हैं । उनके केंचुल या आवरण से हमारे शत्रुओं की आँखें ढँक दें ॥१,२७.१॥

विषूच्येतु कृन्तती पिनाकमिव बिभ्रती ।
विष्वक्पुनर्भुवा मनोऽसमृद्धा अघायवः ॥१,२७.२॥

शत्रुओं का विनाश करने में सक्षम शिव जी के धनुष पिनाक की तरह शस्त्रों को धारण करके शत्रुओं को काटने वाली हमारी वीर सेनाएँ अथवा शक्तियाँ चारों ओर से आगे बढ़ें , जिससे पुन: एकत्रित हुईं शत्रु सेनाओं के मन तितर-बितर हो जाएँ और उसके शासक देश, कोष आदि से हमेशा के लिए निर्धन हो जाएँ ॥१,२७.२॥

न बहवः समशकन् नार्भका अभि दाधृषुः ।
वेणोरद्गा इवाभितोऽसमृद्धा अघायवः ॥१,२७.३॥

अनेकों शत्रु, चारों प्रकार की सेना के साथ भी हमें जीत नहीं पाएं और कम शत्रु हमारे सामने ठहर नहीं सकते । जिस प्रकार बाँस के अंकुर अकेले तथा कमजोर होते हैं । उसी प्रकार पापी मनुष्य दुर्बलता को प्राप्त हो जाएँ ॥१,२७.३॥

प्रेतं पादौ प्र स्फुरतं वहतं पृणतो गृहान् ।
इन्द्रान्येतु प्रथमाजीतामुषिता पुरः ॥१,२७.४॥

हे दोनों पैरो ! आप द्रुतगति से गमन करके आगे बढ़ें तथा वांछित फल देने वाले मनुष्य के घर तक हमें पहुँचाएँ। किसी के द्वारा जीती न की गई, अभिमानी देवता इन्द्राणी सबके आगे-आगे चलें ॥१,२७.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २८- रक्षोघ्न सूक्त

अग्नि देव की स्तुति

उप प्रागाद्देवो अग्नी रक्षोहामीवचातनः ।
दहन्न् अप द्वयाविनो यातुधानान् किमीदिनः ॥१,२८.१॥

रोगों को विनष्ट करने वाले, असुरों का विनाश करने वाले अग्निदेव शंकालुओं, लुटेरों तथा दोमुहे कपटियों को भस्मीभूत करते हुए इस उद्विग्न मनुष्य के समीप पहुँचते हैं ॥१,२८.१॥

प्रति दह यातुधानान् प्रति देव किमीदिनः ।
प्रतीचीः कृष्णवर्तने सं दह यातुधान्यः ॥१,२८.२॥

हे अग्निदेव ! आप लुटेरों तथा सदैव शंकालुओं को भस्मसात् करें । हे काले मार्ग वाले अग्निदेव ! जीवों के

प्रतिकूल कार्य करने वाली लुटेरी स्त्रियों को भी आप भस्मसात् करें ॥१,२८.२॥

या शशाप शपनेन याघं मूरमादधे ।
या रसस्य हरणाय जातमारेभे तोकमत्तु सा ॥१,२८.३॥

जो राक्षसियाँ शाप से शापित करती हैं और जो समस्त पापों का मूल हिंसा रूपी पाप करती हैं तथा जो खून रूपी रसपान के लिए जन्मे हुए पुत्र का भक्षण करना प्रारम्भ करती हैं, वह राक्षसियाँ अपने पुत्र का तथा हमारे शत्रुओं की प्रजा तथा सन्तानों का भक्षण करें ॥१,२८.३॥

पुत्रमत्तु यातुधानीः स्वसारमुत नप्त्यम् ।
अधा मिथो विकेश्यो वि घ्नतां यातुधान्यो वि तृह्यन्तामराय्यः ॥१,२८.४॥

वह राक्षसियाँ अपने पुत्र, बहन तथा पौत्र का भक्षण करें । वह बालों को खीचकर झगड़ती हुईं मृत्यु को प्राप्त करें

तथा दानभाव से विहींन घात करने वाली राक्षसियाँ परस्पर लड़कर मर जाएँ ॥१,२८.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त २९- राष्ट्र अभिवर्धन, सपत्नक्षयण सूक्त

ब्रह्मणस्पति देव की स्तुति

अभीवर्तेन मणिना यहनेन्द्रो अभिववृधे ।
तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेऽभि राष्ट्राय वर्धय ॥१,२९.१॥

हे ब्रह्मणस्पते ! जिस समृद्धिदायक मणि से इन्द्रदेव की उन्नति हुई, उस मणि से आप हमें राष्ट्र के हित लिए विकसित करें ॥१,२९.१॥

अभिवृत्य सपत्नान् अभि या नो अरातयः ।
अभि पृतन्यन्तं तिष्ठाभि यो नो दुरस्यति ॥१,२९.२॥

हे राजन् ! हमारे विरोधी हिंसक शत्रु सेनाओं को, जो हमसे युद्ध करने के इच्छुक हैं, जो हमसे द्वेष करते हैं, आप उन्हें घेरकर पराभूत करें ॥१,२९.२॥

अभि त्वा देवः सविताभि षोमो अवीवृधत्।
अभि त्वा विश्वा भूतान्यभीवर्तो यथाससि ॥१,२९.३॥

हे राजन् ! सवितादेव, सोमदेव और समस्त प्राणिसमुदाय आपको शासनाधिरूढ़ करने में सहयोग करें। इन सबकी अनुकूलता से आप भली-भाँति शासन करें ॥१,२९.३॥

अभीवर्तो अभिभवः सपत्नक्षयणो मणिः ।
राष्ट्राय मह्यं बध्यतां सपत्नेभ्यः पराभुवे ॥१,२९.४॥

यह अभिवर्त मणि शत्रुओं को आवृत करके उनको पराजित करने वाली है तथा विरोधियों का विनाश करने वाली है । विरोधियों को पराभूत करने के लिए तथा राष्ट्र की उन्नति के लिए इस मणि को हमारे शरीर में बाँधे ॥१,२९.४॥

उदसौ सूर्यो अगादुदिदं मामकं वचः ।
यथाहं शत्रुहोऽसान्यसपत्नः सपत्नहा ॥१,२९.५॥

सभी प्राणियों के प्रेरक सूर्यदेव भी उदित हो गए, हमारी वाणी भी मंत्र शक्ति के रूप में प्रकट हो गई है। इनके प्रभाव से हम शत्रुनाशक, दुष्टों पर आघात करने वाले तथा अपराजित बनें ॥१,२९.५॥

सपत्नक्षयणो वृषाभिरष्ट्रो विषासहिः ।
यथाहमेषां वीराणां विराजानि जनस्य च ॥१,२९.६॥

हे मणे ! हम तुम्हारे प्रभाव से शत्रुओं का हनन करने वाले, बलवान् एवं विजयी होकर राष्ट्र के पालक, वीरों तथा प्रजाजनों के हित सिद्ध करने वाले बनें ॥१,२९.६॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ३०- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त

विश्वे देव, आदित्य एवं वस की स्तुति इंद्र

विश्वे देवा वसवो रक्षतेममुतादित्या जागृत यूयमस्मिन् ।
मेमं सनाभिरुत वान्यनाभिर्मेमं प्रापत्पौरुषेयो वधो यः ॥१,३०.१॥

हे वसु इत्यादि इन्द्रादि देवों ! इस आयुष्य की अभिलाषा करने वाले मनुष्य की आप सब सुरक्षा करें । हे आदित्यो ! आप सब भी इस सम्बन्ध में सावधान रहें । इसका विनाश करने के लिए इसके बन्धु अथवा दूसरे शत्रु इस व्यक्ति के समीप न आ सकें। इसको मारने में कोई भी सक्षम न हो सकें ॥१,३०.१॥

यह वो देवाः पितरो यह च पुत्राः सचेतसो मे शृणुतेदमुक्तम्।

सर्वेभ्यो वः परि ददाम्येतं स्वस्त्येनं जरसे वहाथ ॥१,३०.२॥

हे देवताओ ! आपके जो पिता तथा पुत्र हैं, वह सब आयु की कामना करने वाले व्यक्ति के विषय में मेरी इस प्रार्थना को सावधान होकर सुनें । हम इस व्यक्ति को आपके लिए समर्पित करते हैं। आप इसकी संकटों से सुरक्षा करते हुए इसे पूर्ण आयु तक हर्षपूर्वक पहुँचाएँ ॥१,३०.२॥

यह देवा दिवि ष्ठ यह पृथिव्यां यह अन्तरिक्ष ओषधीषु पशुष्वप्स्वन्तः ।
ते कृणुत जरसमायुरस्मै शतमन्यान् परि वृणक्तु मृत्यून् ॥१,३०.३॥

हे समस्त देवो ! आप जगत् के कल्याण के निमित्त द्युलोक में निवास करते हैं । हे अग्नि आदि देवो ! आप पृथ्वी पर निवास करते हैं। हे वायुदेव ! आप अन्तरिक्ष में निवास करते हैं। हे औषधियों तथा गौओं में विद्यमान देवताओ ! आप इस आयुष्यकामी व्यक्ति को लम्बी आयु प्रदान करें

। आपकी सहायता से यह व्यक्ति मृत्यु के कारणरूप सैकड़ो ज्वरादि रोगों से सुरक्षित रहे ॥१,३०.३॥

यहषां प्रयाजा उत वानुयाजा हुतभागा अहुतादश्च देवाः ।
यहषां वः पञ्च प्रदिशो विभक्तास्तान् वो अस्मै सत्रसदः कृणोमि ॥१,३०.४॥

जिन अग्निदेव के लिए पाँच याग किए जाते हैं और जिन इन्द्र आदि देव के लिए तीन याग किए जाते हैं। और अग्नि में होमी हुई आहुतियाँ जिनका भाग है, अग्नि से बाहर डाली हुई आहुतियों का सेवन करने वाले बलिहरण आदि देव तथा पाँच दिशाएँ जिनके नियन्त्रण में रहती हैं। उन समस्त देवों को हम आयुष्यकामी व्यक्ति की आयुर्वृद्धि के लिए उत्तरदायी बनाते हैं ॥१,३०.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ३१- पाशमोचन सूक्त

यम आदि चार देवों के लिए मंत्रों की आहुति

आशानामाशापालेभ्यश्चतुर्भ्यो अमृतेभ्यः ।
इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यो विधेम हविषा वयम् ॥१,३१.१॥

समस्त प्राणियों के अधिपति तथा अमरता से सम्पन्न इन्द्र आदि चार दिक्पालों अर्थात पूर्व के इन्द्र, , दक्षिण के यम, पश्चिम के वरूण और उत्तर के कुबेर के लिए इस यज्ञ में हम सब मन्त्रयुक्त हवि समर्पित करते हैं ॥१,३१.१॥

य आशानामाशापालाश्चत्वार स्थन देवाः ।
ते नो निर्ऋत्याः पाशेभ्यो मुञ्चतांहसोअंहसः ॥१,३१.२॥

हे देवो ! आप चारों दिशाओं के चार दिशापालक हैं। आप हमें हर प्रकार के पापों से बचाएँ तथा पतनोन्मुख पाशों से मुक्त करें ॥१,३१.२॥

अस्रामस्त्वा हविषा यजाम्यश्लोणस्त्वा घृतेन जुहोमि ।
य आशानामाशापालस्तुरीयो देवः स नः सुभूतमेह वक्षत्॥१,३१.३॥

हे धनपते ! हम इच्छित ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए, अश्रान्त होकर आपके लिए आहुति समर्पित करते हैं। हम श्लोण अर्थात लँगड़ापन नामक रोग से रहित होकर आपके लिए घृत द्वारा आहुति समर्पित करते हैं। पूर्व वर्णित चतुर्थ दिक्पाल अरततः कुबेर हमें स्वर्ण आदि सम्पत्ति प्रदान करें और हमारी आहुतियों से प्रसन्न हों ॥१,३१.३॥

स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः।
विश्वं सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु ज्योगेव दृशेम सूर्यम् ॥१,३१.४॥

हमारी माता तथा हमारे पिता कुशल से रहें । हमारी गौएँ, हमारे स्वजन तथा सम्पूर्ण संसार कुशल से रहें । हम सब श्रेष्ठ ऐश्वर्य तथा श्रेष्ठ ज्ञान वाले हों और सैकड़ों वर्षों तक सूर्य का दर्शन करने वाले हों अर्थात दीर्घजीवी हों ॥१,३१.४॥

सूक्त ३२- मद्ब्रह्म सूक्त

देव कुबेर से स्वर्ण व रजत आदि धन देने का आग्रह

इदं जनासो विदथ महद्ब्रह्म वदिष्यति ।
न तत्पृथिव्यां नो दिवि यहन प्राणन्ति वीरुधः ॥१,३२.१॥

हे जिज्ञासुओ ! आप इस विषय में ज्ञान प्राप्त करें कि वह ब्रह्म धरती पर अथवा द्युलोक में ही निवास नहीं करता, जिससे औषधियाँ 'प्राण' प्राप्त करती हैं ॥१,३२.१॥

अन्तरिक्ष आसां स्थाम श्रान्तसदामिव ।
आस्थानमस्य भूतस्य विदुष्ट्द्वेधसो न वा ॥१,३२.२॥

इन औषधियों का निवास स्थान जल और पृथ्वी के बीच अन्तरिक्ष में हैं । जिस प्रकार थके हुए मनुष्य विश्राम करते हैं, उसी प्रकार यह औषधियाँ अन्तरिक्ष में निवास करती

हैं। इस बने हुए स्थान को विधाता और मनु आदि जानते हैं अथवा नहीं? ॥१,३२.२॥

यद्रोदसी रेजमाने भूमिश्च निरतक्षतम् ।
आर्द्रं तदद्य सर्वदा समुद्रस्येव श्रोत्याः ॥१,३२.३॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आपने तथा धरती ने जो कुछ भी उत्पन्न किया है । वह सब उसी प्रकार हर समय नया रहता है, जिस प्रकार सरोवर से निकलने वाले जलस्रोत अक्षय रूप में निकलते रहते हैं ॥१,३२.३॥

विश्वमन्यामभीवार तदन्यस्यामधि श्रितम् ।
दिवे च विश्ववेदसे पृथिव्यै चाकरं नमः ॥१,३२.४॥

यह अन्तरिक्ष इस जगत् का आवरण रूप है। धरती के आश्रय में रहने वाला यह विश्व आकाश से वृष्टि के लिए प्रार्थना करता है। उस द्युलोक तथा समस्त ऐश्वर्यों से सम्पन्न पृथ्वी को हम नमन करते हैं ॥१,३२.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ३३- आपः सूक्त

पृथ्वी और आकाश को नमन रोग विनाशक जल देव की स्तुति

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका यासु जातः सविता यास्वग्निः ।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ॥१,३३.१॥

जो जल सोने के समान आलोकित होने वाले रंग से सम्पन्न, अत्यधिक मनोहर, शुद्धता प्रदान करने वाला है, जिससे सवितादेव और अग्निदेव उत्पन्न हुए हैं। जो श्रेष्ठ रंग वाला जल अग्निगर्भ है, वह जल हमारी व्याधियों को दूर करके हम सबको सुख और शान्ति प्रदान करे ॥१,३३.१॥

यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यन् जनानाम् ।

या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ॥१,३३.२॥

जिस जल में रहकर राजा वरुण सत्य एवं असत्य का निरीक्षण करते चलते हैं। जो सुन्दर वर्ण वाला जल अग्नि को गर्भ में धारण करता है, वह हमारे लिए शान्तिप्रद हो ॥१,३३.२॥

यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ॥१,३३.३॥

जिस जल के सारभूत तत्त्व तथा सोमरस को इन्द्रदेव आदि देवता द्युलोक में सेवन करते हैं। जो अन्तरिक्ष में विविध प्रकार से निवास करते हैं। वह अग्निगर्भा जल हम सबको सुख और शान्ति प्रदान करे ॥१,३३.३॥

शिवेन मा चक्षुषा पश्यतापः शिवया तन्वोप स्पृशत त्वचं मे।

घृतश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ॥१,३३.४॥

हे जल के अधिष्ठाता देव ! आप अपने कल्याणकारी नेत्रों द्वारा हमें देखें तथा अपने हितकारी शरीर द्वारा हमारी त्वचा का स्पर्श करें। तेजस्विता प्रदान करने वाला शुद्ध तथा पवित्र जल हमें सुख तथा शान्ति प्रदान करे ॥१,३३.४॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ३४- मधुविद्या सूक्त

मधु लता का वर्णन

इयं वीरुन् मधुजाता मधुना त्वा खनामसि ।
मधोरधि प्रजातासि सा नो मधुमतस्कृधि ॥१,३४.१॥

सामने स्थित, चढ़ने वाली मधुक नामक लता मधुरता के साथ पैदा हुई है । हम इसे मधुरता के साथ खोदते हैं। हे वीरुत् ! आप स्वभाव से ही मधुरता सम्पन्न हैं। अत: आप हमें भी मधुरता प्रदान करें ॥१,३४.१॥

जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम् ।
ममेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि ॥१,३४.२॥

हमारी जिह्वा के अगले भाग में तथा जिह्वा के मूल भाग में मधुरता रहे। हे मधूलक लते ! आप हमारे शरीर, मन तथा कर्म में विद्यमान रहें ॥१,३४.२॥

मधुमन् मे निक्रमणं मधुमन् मे परायणम् ।
वाचा वदामि मधुमद्भूयासं मधुसंदृशः ॥१,३४.३॥

हे मधुक ! आपको ग्रहण करके हमारा निकट का गमन मधुर हो और दूर का जाना मधुर हो। हमारी वाणी भी मधुरता युक्त हो, जिससे हम सबके प्रेमास्पद बन जाएँ ॥१,३४.३॥

मधोरस्मि मधुतरो मदुघान् मधुमत्तरः ।
मामित्किल त्वं वनाः शाखां मधुमतीमिव ॥१,३४.४॥

हे मधुक लते ! आपकी समीपता को ग्रहण करके हम शहद से अधिक मीठे हो जाएँ तथा मधुर पदार्थ से भी ज्यादा मधुर हो जाएँ। आप हमारा ही सेवन करें। जिस

प्रकार मधुर फलयुक्त शाखा से पक्षीगण प्रेम करते हैं, उसी प्रकार सब लोग हमसे प्रेम करें ॥१,३४.४॥

परि त्वा परितल्नुनेक्षुणागामविद्विषे ।
यथा मां कमिन्यसो यथा मन् नापगा असः ॥१,३४.५॥

सब तरफ से घिरे हुए, मीठे ईख के सदृश, एक दूसरे के प्रिय तथा मिठास युक्त रहने के निमित्त ही हम तुमको प्राप्त हुए हैं । हमारी कामना करने वाली रहो तथा हमें परित्याग करके तुम न जा सको, इसीलिए हम तुम्हारे समीप आए हैं ॥१,३४.५॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त ३५- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त

हिरण्य का वर्णन

यदाबध्नन् दाक्षायणा हिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः ।
तत्ते बद्ग्राम्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय शतशारदाय
॥१,३५.१॥

हे आयु की कामना करने वाले मनुष्य ! श्रेष्ठ विचार वाले दक्षगोत्रीय महर्षियों ने 'शतानीक राजा' को जो हर्ष प्रदायक सुवर्ण बाँधा था। उसी सुवर्ण को हम, आपके आयु वृद्धि के लिए, तेज और सामर्थ्य की प्राप्ति के लिए तथा सौ वर्ष की दीर्घ आयु प्राप्त कराने के लिए आपको बाँधते हैं ॥१,३५.१॥

नैनं रक्षांसि न पिशाचाः सहन्ते देवानामोजः प्रथमजं ह्येतत्।
यो बिभर्ति दाक्षायणं हिरण्यं स जीवेषु कृणुते दीर्घमायुः
॥१,३५.२॥

सुवर्ण धारण करने वाले मनुष्य को राक्षस और पिशाच आदि, ज्वर आदि रोग कष्ट नहीं पहुँचाते । मांस का भक्षण करने वाले असुर उसको पीड़ित नहीं कर सकते, क्योंकि यह हिरण्य इन्द्रादि देवों से प्रथम उत्पन्न हुआ ओज है । जो व्यक्ति दक्ष पुत्रों से संबंधित इस सुवर्ण को धारण करते हैं, वह सभी दीर्घ आयु को प्राप्त करते हैं ॥१,३५.२॥

अपां तेजो ज्योतिरोजो बलं च वनस्पतीनामुत वीर्याणि ।
इन्द्र इवेन्द्रियाण्यधि धारयामो अस्मिन् तद्दक्षमाणो बिभरद्धिरण्यम् ॥१,३५.३॥

हम इस मनुष्य में जल का ओजस्, तेजस्, शक्ति, सामर्थ्य तथा वनस्पतियों के समस्त वीर्य स्थापित करते हैं, जिस प्रकार इंद्रियों से सम्बन्धित बल इंद्र के अन्दर विद्यमान रहता है, उसी प्रकार हम उक्त गुणों को इस व्यक्ति में स्थापित करते हैं। अत: बलवृद्धि की कामना करने वाले मनुष्य स्वर्ण धारण करें ॥१,३५.३॥

समानां मासामृतुभिष्ट्वा वयं संवत्सरस्य पयसा पिपर्मि ।
इन्द्राग्नी विश्वे देवास्तेऽनु मन्यन्तामहृणीयमानाः ॥१,३५.४॥

हे समस्त धन की कामना करने वाले मनुष्य ! हम आपको समान मास वाली ऋतुओं तथा संवत्सर पर्यन्त रहने वाले गौ दुग्ध से परिपूर्ण करते हैं। इन्द्र, अग्नि तथा अन्य समस्त देव आपकी गलतियों से क्रोधित न होकर स्वर्ण धारण करने से प्राप्त फल की अनुमति प्रदान करें अर्थात संपन्नता कि अनुमति दें ॥१,३५.४॥

॥इति प्रथम काण्डम्॥